© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 04 , Issue : 07 | October - December 2018

चरित्र निर्माण में कर्मयोग की उपादेयता

श्री जयपाल सिंह राजपूत[1] ,सुमन[2]

[1]सहायक प्राध्यापक, योग विज्ञान , चौ. रणबीर सिंह विश्वविद्यालय, जीन्द।
[2]एम॰ए॰ योग द्वितीय वर्ष , चौ. रणबीर सिंह विश्वविद्यालय, जीन्द।

शोध– आलेख सारः–

चरित्र निर्माण की बातें आज परिवारों में उपेक्षित हैं, शैक्षणिक संस्थानों में नदारद्र है, समाज में लुप्तप्रायः है। शायद ही इसको लेकर कहीं गम्भीर चर्चा होती हो जब घर–परिवार एंव शिक्षा के साथ व्यक्ति निर्माण समाज निर्माण और राष्ट्र निर्माण का जो रिश्ता जोड़ा जाता है, वह चरित्र निर्माण की धूरी पर ही टिका हुआ है। आश्चर्य नहीं कि हर युग पर बल देते रहे हैं। चरित्र निर्माण के बिना अविभावकों की चिंता, शिक्षा के प्रयोग समाज का निर्माण अधूरा है। व्यक्तित्व का विकास ही चरित्र से होता है और चरित्र से ही पहचान होती है। इसलिए चरित्र निर्माण सबके लिए महत्वपूर्ण है। यूनान के महान् दार्शनिक सुकरात ने भी पुकार–पुकार कर कहा था कि अपने को पहचानो। अपने को पहचानो शब्द का अर्थ वही है कि अपने चरित्र को पहचानो। उपनिषदो में कहा है– 'आत्मा बोर श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितत्वः, नान्यतोऽहस्त विजानतः' तब इसी दुर्बोध मनुष्य– चरित्र को पहचानने प्रेरणा की थी।

लेकिन आज के युग में मनुष्य का चरित्र गिरता जा रहा है। जब हम पौराणिक कथाए पढते थे तो तब हमें अपने पूर्वजो पर गर्व हेाता था लेकिन आज वर्तमान में देखते है तो गिरते हुए चरित्र पर मन आहत हो जाता है। हर रोज समाचारों में पढ़ते है भ्रूण हत्या के बारे में, गर्भस्थ प्राणी की हत्या वह भी उनके हाथों जो उनके सर्जक है छोटी–मोटी बच्चीयों का बलात्कार, माँ–बाप को तिस्कृत कर घर छोड़कर वृद्धाश्रम का रास्ता खुद की संताने ही दिखाती हैं। उनसे घृणित व्यवहार किया जाता है। दिल रोता है तब जब धर्म के ठेकेदार धर्म की आड में वासना का खेल खेलते हैं और सत्कर्मो का उपदेश देते है। व्यापार के नाम पर युवाओं को सट्टे लगाते देखते है तो मानो चरित्र कही खो सा गया है। आखिर क्यों हमारी युवा पीड़ी अपने नैतिक मूल्य खोती जा रही है। जो संस्क्कार हमारे पूर्वजो के थे वो संस्कार हम अपनी नई पीड़ी को देने में कामयाब नहीं हो पा रहे है मेरी नजर में इसके दोषी भी हम खुद है, हमारा परिवार है, हमारे माँ बाप है हमारी शिक्षा प्रणाली का है। जब हम छोटे होते थे हमारे पास एक नैतिक शिखा की किताब होती थी जिनमे बहुत अच्छी–2 कहानियां होती थीं एक बार मन में उनके जैसा बनने की तीव्र इच्छा होती थी लेकिन शायद आजकल उस नैतिक शिक्षा की किताब का अर्थ ही बदल गया है, उसका कोई महत्व ही नहीं रह गया है, और शायद वो नैतिक शिखा की किताब स्कूलों स गायब भी हो चुकी होगी। आज सभी के घरों में कोमिक्स और कम्प्यूटर गेम तो मिल जाएगें लेकिन क्या आप कभी अपने बच्चों के लिए सरदार भगत सिंह की , स्वामी विवेकानन्द की, प्रेरणागत किताब लाए हैं।

भूमिका–

आज का युग विज्ञान युग है। ये जितना भी अधुनिक होता जा रहा है उतने ही मानवीय मूल्य गिरते जा रहे है हर दिन चोरी, डकैती, हत्या, बलात्कार, भ्रण हत्या के मामले बढते ही दिखाई दे रहे है। जितना भी विज्ञान तरक्की कर रहा है। उतने ही समाज का स्तर घटता जा रहा है। प्राचीन युग में लोग ऐसा घटनाएं बहुत कम देखने को मिलती थी, न के बराबर। लेकिन आज स्वरूप बिल्कुल बदल गया है। घटनाएं कढ़ रही है। यह प्राचीन युग और आधुनिक युग में जो अंतर आया है उसका कारण

यह है कि जो प्राचीन ग्रंथ थे जैसे वेद, उपनिषद, महाभारत, रामायण सत्यार्थ प्रकाश आदि इन ग्रन्थों को आज कोई जानता ही नहीं है। महाभारत में श्री मद्भगवद गीता में कर्मो के बार में विस्तृत जानकारी दी गई है। यदि इन ग्रन्थों के बारे में अध्ययन किया जाए तो यह गिरते मानवीय मूल्यों में सुधार ही सकता है।

चरित्र निर्माण में कर्मयोग का महत्व –

अनेको ग्रन्थों में अलग–2 प्रकार के कर्म बताए गए है।

गीता के अनुसार कर्म तीन प्रकार के है

1) कर्म 2) अकर्म 3) विकर्म

वैदिक ग्रंथों में दो प्रकार के कर्म का वर्णन किया गया है– 1) विहित कर्म 2) निषिद्ध कर्म

1) विहित कर्म– जो कार्य करने योग्य है इसके चार भेद बातए गए हैं।

2) निषिद्ध कर्म– अर्थात जो बुरे कर्म है।

यदि मनुष्य इन कर्मो को जान ले इनका अध्ययन करे या इन ग्रन्थो को शिक्षा प्रणाली में सुधार हो सकता है। गिरते हुए मानवीय मूल्यों को बचाया जा सकता है।

कठोपनिषद के अनुसार–

योनिमन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहितन।

स्थाणु मन्ये ऽनुसंयन्ति यथाकर्म यथाश्रुतम। (कठोपनिषद 2/2/7)

अर्थात अपने कर्म और ज्ञान के अनुसार कितने ही जीवात्मा को शरीर धार करने के लिए किसी देव, मनुष्य, पशु–पक्षी आदि योनियों को प्राप्त होते है और कितने ही स्थापन और वृक्षादि योनियों को प्राप्त होते हैं।

इस श्लोक के अनुसार जैसे–2 मनुष्य कर्म करता है उसी के अनुसार ही मनुष्य को कर्म भोगने होते है। उसी के अनुसार जीव योनिया प्राप्त होती है। हमें मनुष्य योनि बहुत ही मुश्किल से मिलती है। यदि हमें अपने समय को बुरे कर्मो में व्यतित करेगे तो उसका फल भी बुरा होता है इस प्रकार यदि इनके बारे में बाल अवस्था में ही अध्ययन करवाया जाए तो शायद– हम अच्छे चरित्र का निर्माण कर सकते है।

पं0 श्रीराम शर्मा जी कहते है कि जिसमें स्वार्थ और परमार्थ, लोक और परलोक संसार की सेवा आत्म– कल्याण दोनों का समावेश समान रूप से होता है तथा अपने कर्तव्य के प्रति तल्लीनता तथा विषय जन्य भावनाओं के प्रति निरासक्ति ही कर्मयोग है। कुशलता के साथ कर्तापन का अभिमान छोड़कर कर्म किया जाए और उसके फल में निलिप्त निस्पृह अथवा अनासक्त रहा जाए जिसे न तो सफलता का अभिमान हो और न ही असफलता में निराशा। यदि हम अपने बारे में न सोचकर बिना फल की इच्छा के कार्य करते है तो ऐसे में हमारी बुद्धि शांत रहती है। एक अन्य जगह श्रीमदभगवद गीता में कहा गया है कि

न हि कश्चित् क्षणमपि जातु निष्ठत्यकर्म कृत्।

कार्यते ह्यावशः कर्म सर्वः प्रकृति जैर्गुणैः।। भ0गी0 3/5

अर्थात कोई भी मनुष्य किसी भी काल में क्षण मात्र भी कर्म किये बिना नहीं रह सकता। क्योंकि समस्त मनुष्य समुदाय प्रकृति जनित गुणों के द्वारा कर्म करने के लिए बाध्य किया जाता है।

बुद्धि युक्तो जहातीह उभे सृकृत दुष्कृते।

तस्माद्यो गाय युज्ससव योगः कर्मसु कौशलम्। (श्रीमदभागतद्गीता 2/50)

अर्थात समबुद्धियुक्त पुरूष पाप और पुण्य दोनों को इसी लोक में त्याग देता है अर्थात उनसे मुक्त हो जाता है इससे तू समत्वरूप योग में लग जा, यह समत्व रूप योग ही कर्मो की कुशलता है अर्थात् कर्मबंधन से छूटने का उपाय है।

यत्संयोगो द्विजश्रेष्ठ सच द्वेविध्यमश्नुतै।

कर्म कर्तव्यमित्येत विहितेष्वेव कर्मसु। त्रिशिखब्राहाणोपनिषद (2/25)

हे द्विज श्रेष्ठ सयोग भी दो प्रकार के होते हैं। कर्म और कर्तव्य द्वारा शास्त्रानुकूल कर्मो में मन को निरन्तर नियुक्त किये रहना कर्म योग है।

इन श्लोको के अनुसार कर्मयोग को श्रेष्ठ बताया गयाहै। कर्मयोग की साधना के द्वारा चरित्र निर्माण हो सकता है। यदि कर्मयोग को पढ़ा जाए या पाठ्य कर्म में मिलाया जाए तो मानवीय मूल्यों में सुधार आएगा।

"युक्ति तत्रैव जन्मनि। प्राप्नोति योगी

योगाग्नि छग्धकर्मचयोऽचिरात्।। (विष्णुपुराण 6/7/65)

अर्थात केवलमात्र योग या चितेन्द्रियों की स्थिरता के द्वारा ही कर्मक्षय संपूर्ण–रूप से हो सकता है। कई लोग समझते है कि कर्म का फलभोग हो जाने पर ही कर्म का क्षय हो गया। लेकिन अनेक नये कर्म भी होते है, जिनसे कर्माशय और वासना होकर पुनः कर्म प्रवाह चलता रहता है।

कृर्वन्नेवहे कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।

एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।। (ईशोपनिषद् 2/2)

अर्थात् सर्वशक्तिमान परमेश्वर की सर्वव्यापकता को सतत् स्मरण रखते हुए उन्हीं की पूजा के निमित शास्त्रों द्वारा प्रतिपादित कर्तवय कर्मो को करते हुए ही इस संसार में सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करो। अर्थात् अपना सारा जीवन ईश्वर को समर्पण कर दो। ऐसा करने से वे कर्म तुझे बनधन में नहीं डाल सकेगें। कर्म करते हुए कर्म से लिप्त न होने का यही एकमात्र उपाय है। कर्मबन्धन से मुक्त होने का अन्य कोई साधन नहीं है।

"अज्ञानी को अपने सब कर्मो का फल इसलिए भुगतना पड़ता है कि उसके कर्मो का सार वासना है। वासना के क्षीण हो जाने से ज्ञानी को अपनी किसी क्रिया का फल नहीं भोगना पड़ता"

(योगवशिष्ठ के सिद्धान्त–205)

एवं बद्धस्तया जीवः कर्मनाशे सदाशिवः।

पाशबद्धस्तथा जीवः पाशमुक्तः सदाशिवः।।(योग उपनिषद संग्रह)

अर्थात इसी प्रकार कर्म में बंधा होने पर वह जीव कहाता है औरक कर्म का नाश होने पर वह सदाशिव हो जाता है पाश में बंधा होने पर वह जीव होता है ओर पाश से मुक्त होने पर सदाशिव हो जाता है।

आरूरूक्षोर्मुनेयोग कर्म कारणमुच्यते।

योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते। (भ0गी0 6/3)

अर्थात जो मुनि योग साधना में आगे बढना चाहता है, उसके लिए कर्म हेतू बतलाया गया है वही जब योगारूढ़ हो जाता है, तब उसके लिए शम कारण कहा गया है।"

निष्कर्षः–

अतः कर्मयोग चरित्र निर्माण में अहम भूमिका निभा सकता है। यदि इसे अमल में लाया जाया। लेकिन दिक्कत तो इस बात की हैकि आज की युवा पीढ़ी जानती ही नहीं है कि श्रीमद्भगवद गीता क्या है इसका क्या महत्व है। कर्मयोग क्या है और इसका महत्व क्या है। कर्मयोग नाम का कोई अध्याय भी है। यदि कर्मयोग को पाठ्यकर्म में लगाया जाए। नैतिक शिक्षा की किताबे पढ़ाई जाए। माँ बाप बच्चों को अच्छे संस्कार दे तो गिरते हुए माननीय मूल्यों में सुधार होगा। एक अच्छे चरित्र के व्यक्ति बनेगा।

लेकिन इसके लिए जरूरत है तो सिर्फ प्रयास की। आज किसी के पास न तो परिवार के लिए समय है न बच्चो के लिए और किताबो का तो कही नाम ही नहीं है। किताबो का कम आज घरो में केवल सजावट का रहा गया है। यदि सब मिलकर प्रयास करेगे तो हम समाज को अच्छे व्यक्तितत्व दे सकते है। गिरते मानवीय मूल्यों में सुधार आएगा। बढ़ते हुए अपराध को रोका जा सकता है। क्योंकि जब चरित्र निर्माण अच्छा होगा तो अपराध अपने आप ही बंद हो जाएगे।

संदर्भ

1) कठोपनिषद– (2/2/7)
2) श्रीमद्भगतद् गीता– (3/5)
3) श्रीमद्भगतद् गीता– (2/50)
4) विशिख ब्राहाणोपनिषद् (2/25)
5) विष्णु पुराण (6/7/65)
6) ईशोपनिषद (2/2)
7) योगवाशिष्ठ के सिद्धान्त–205
8) श्रीमद्भगतद् गीता (6/3)